"सब कर्मोंका उत्कृष्ट प्रदेशबन्ध उत्कृष्ट योगके सद्भावमें होता है। और उत्कृष्ट योगका जघन्य काल एक रहस्यमय और उत्कृष्ट काल दो समय है। इसलिए यहाँ ओघसे आठों कर्मोंके उत्कृष्ट प्रदेशबन्धका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल दो समय कहा है। यह सम्भव है कि अनुत्कृष्ट योग एक समय तक हो और अनुत्कृष्ट योगके सद्भावमें उत्कृष्ट प्रदेशबन्ध सम्भव नहीं, इसलिए ओघसे आठों कर्मोंके अनुत्कृष्ट प्रदेश-बन्धका जघन्य काल एक समय कहा है। अब शेष रहा आठों कर्मोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशबन्धका उत्कृष्ट काल सो उसका स्पष्टीकरण इस प्रकार है"—

विशेषार्थमें यह ध्यान बराबर रखा गया है कि जो बात पहले लिख आये हैं उसकी पुनरावृत्ति न हो। इसलिए कहीं-कहीं संकेत या उल्लेख भी किया गया है। जैसे कि काल-प्ररूपणाके प्रकरणमें विशेषार्थमें लिखा गया है—

'कालका खुलासा पहले जिस प्रकारकर आये हैं उसे ध्यानमें रखकर यहाँ भी कर लेना चाहिए। मात्र बादर पर्याप्त निगोदोंका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त जानना चाहिए।'

इस प्रकार आगम ग्रन्थोंके सतत अभ्याससे जिन्होंने सिद्धान्तके प्ररूपणमें विशदता प्राप्त की है उनके सम्पादित ग्रन्थ स्वतः सिद्धान्तमय हैं, इसमें आश्चर्यकी क्या बात है ?

●

तत्त्वार्थसूत्रटीका : एक समीक्षा

डॉ० पन्नालाल साहित्याचार्य, सागर

तत्त्वार्थसूत्रके पूर्व जैन श्रुतमें तत्त्वोंका निरूपण भगवन्त पुष्पदन्त और भूतबलिके द्वारा प्रचारित सत् संख्या आदि अनुयोगोंके माध्यमसे होता था। इसका उल्लेख तत्त्वार्थसूत्रमें 'सत्संख्या क्षेत्र स्पर्शन काला-न्तर भावाल्प बहुत्वैश्च' सूत्रके द्वारा किया है। इस शैलीका अनुगमन करनेवाला आचार्य नेमिचन्द्रजीका गोम्मटसार है। उमास्वामी महाराजने तत्त्वार्थसूत्रमें जिस शैलीको अंगीकृत किया, वह सरल होनेसे सबको ग्राह्य हुई। तत्त्वार्थसूत्रपर दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों सम्प्रदायोंमें विविध संस्कृत टीकाएँ लिखी गई हैं। आचार्य पूज्यपादकी 'सर्वार्थसिद्धि' अकलंकदेव का राजवार्तिक विद्यानन्दका श्लोकवार्तिक और उमास्वातिका तत्त्वार्थाधिगमभाष्य अत्यन्त प्रसिद्ध टीकाएँ हैं। समन्तभद्र स्वामीके गन्धहस्ति महाभाष्यका उल्लेख मात्र मिलता है, पर ग्रन्थ कहीं उपलब्ध नहीं हो रहा है। यह रही संस्कृत टीकाओंकी बात, परन्तु तत्त्वार्थसूत्रकी शैलीसे तत्त्वोंका निरूपण करनेवाले हरिवंशपुराण, आदिपुराण, पद्मपुराण तत्त्वार्थसार तथा पुरुषार्थसिद्ध्युपाय आदि अनेक स्वतन्त्र ग्रन्थ उपलब्ध हैं। तात्पर्य यह है कि यह तत्त्व-निरूपणकी शैली ग्रन्थकारोंको इतनी रुचिकर लगी कि पूर्व शैलीको एकदम भुला दिया गया है।

"तत्त्वार्थसूत्र" पर अनेकों विद्वानोंने हिन्दी टीकाएँ लिखी हैं जो संक्षिप्त, मध्यम और विस्तृत सब प्रकारकी हैं। पं० सदासुखरायजी कासलीवालकी 'अर्थ प्रकाशिका' नामकी विस्तृत टीका है। उसमें प्रसङ्गोपात्त अनेक विषयोंका समावेश किया गया है। आधुनिक टीकाओंमें सिद्धान्ताचार्य पण्डित फूलचन्द्रजी शास्त्रीकृत और वर्णी ग्रन्थमालासे प्रकाशित टीका 'तत्त्वार्थसूत्र' हमारे सामने है। इस टीकामें पण्डितजीने टिप्पणमें श्वेताम्बर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्प्रदायमें प्रचलित पाठ-भेदोंका भी समुल्लेख किया है तथा प्रश्नोत्तरकी पद्धतिको अपनाकर प्रसङ्गागत अनेक विषयोंको स्पष्ट किया है।

पण्डित फूलचंद्रजी धवलादि ग्रन्थोंके माने हुए विद्वान् हैं। अतः उन्होंने बीच-बीचमें उसके आश्रयसे विषयको स्पष्ट किया है। यथा—

प्रथमाध्यायमें व्यञ्जनावग्रह और अर्थावग्रहके स्वरूप तथा भेदोंको स्पष्टकर यह प्रतिफलित किया है कि चक्षु और मन जहाँ अप्राप्यग्राही हैं, वहाँ शेष चार इन्द्रियाँ प्राप्यग्राही तथा अप्राप्यग्राही—दोनों प्रकारकी हैं। प्रमाण और नयोंका विवेचनकर उनका अन्तर बतलाया है तथा नैगमादि नयोंका विशद विवेचन किया है।

द्वितीयाध्यायमें वेदोंके साम्य और वैषम्यका विषय स्पष्टकर अकालमरणके रहस्यको उद्घाटित किया है। औदारिकादि शरीरोंकी विशिष्टता प्रकट करते हुए आहारक और अनाहारकके स्वरूपकी चर्चाकी है। विग्रहगतिके भेद और उसमें पाई जानेवाली आहारक तथा अनाहारक अवस्थाको स्पष्ट किया है। भवस्थिति और कायस्थितिका अन्तर बतलाया है। ऋजुगतिवाला जीव अनाहारक क्यों नहीं होता है? इसका प्रतिपादन किया है।

तृतीयाध्यायके प्रारम्भमें लोककी आकृति तथा भेदोंकी चर्चाकर उसके चित्र देते हुए घनफल निकालने की विधिको दर्शाया है। अधोलोकका विस्तृत वर्णन कर रत्नप्रभा आदि पृथिवियोंके स्वरूपपर अच्छा प्रकाश डाला है।

चतुर्थाध्यायमें वैमानिक देवोंकी स्थितिका वर्णन करते हुए घातायुष्क और अघातायुष्क देवोंकी चर्चाकी है तथा घातायुष्क कहाँ तक उत्पन्न होते हैं उनकी आयु अन्यदेवोंकी आयुकी अपेक्षा कितनी अधिक होती है, यह स्पष्ट किया है।

पञ्चमाध्यायमें जीवाजीवादि द्रव्योंकी चर्चा करते हुए आधुनिक विज्ञानका आश्रय लेकर षड्द्रव्योंका समर्थन किया है। खासकर धर्म अधर्मकी कल्पनाको स्पष्ट किया है। पञ्चमाध्यायका विवेचन प्रवचनकर्त्ता विद्वानोंको खासकर देखना चाहिए इससे अनेक प्रवचनोंमें रोचकता और आकर्षण उत्पन्न होगा। परमाणुओंका परस्पर बन्ध क्यों होता है और किस स्थितिमें होता है यह सब विषय अत्यधिक स्पष्ट किया है। प्रसङ्गोपात्त विभिन्न उपादानकी चर्चाकी गई है।

षष्ठ अध्यायमें सातावेदनीय, असातावेदनीय, दर्शनमोह और चारित्रमोहके आस्रवोंकी चर्चा करते हुए केवलीके कवलाहार क्यों नहीं होता है? आदि विषयोंको स्पष्ट किया है।

सप्तमाध्यायमें हिंसा-अहिंसाके स्वरूपका दिग्दर्शन कराते हुए रात्रिभोजन-परित्यागपर पर्याप्त प्रकाश डाला है और समाजमें बढ़ते हुए शिथिलाचार पर खेद व्यक्त किया है। व्रतोंके अतिचारोंका भी स्वरूप चित्रण अच्छा हुआ है। इसी अध्यायमें सल्लेखनाकी चर्चा करते हुए प्रश्नोत्तरोंके माध्यमसे स्पष्ट किया है कि सल्लेखना करनेवाला आत्मघाती नहीं है।

अष्टमाध्यायमें कर्म तथा उसकी अवान्तर प्रकृतियोंकी चर्चा करते हुए सातावेदनीय तथा असातावेदनीय यतश्च जीव क्रियाकी प्रकृतियाँ हैं। अतः सुख दुःखका वेदन तो कराती हैं, परन्तु उनकी सामग्री एकत्रित नहीं करतीं। यह सामग्री अन्यान्य कर्मोंके उदयसे एकत्रित होती है। इस विषयकी विशद चर्चाकी है। प्रदेशबन्ध की चर्चा करते हुए कर्मोंके विषयमें विषद जानकारी दी है।

नवमाध्यायमें, बारह अनुप्रेक्षाओं, बाईस परिषहों तथा धर्म्यध्यान और शुक्लध्यानके भेदोंकी अच्छी चर्चाकी है। सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यातचारित्र तथा अनशनादि तपोंका विशद वर्णन किया है। निर्जराके दश स्थानोंका स्पष्टीकरण भी उत्तम हुआ है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दशमाध्यायमें केवलज्ञानकी प्राप्तिके कारणोंपर प्रकाश डालकर मोक्षका स्वरूप तथा मुक्त जीवोंमें जिन क्षेत्र, काल आदि १२ अनुयोगोंसे वैशिष्टय होता है उनका स्पष्टीकरण है।

"तत्त्वार्थसूत्र" जिनागमका महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है, यह सर्वमान्य बात है। इसमें प्रथमानुयोगको छोड़कर शेष तीन अनुयोगोंका सार संगृहीत है। इसके विधिवत् स्वाध्यायसे जिनागमका अच्छा ज्ञान हो जाता है। पर्युषण पर्वमें इसीका प्रवचन सर्वत्र चलता है और अतिरिक्त समयमें भी सबलोग इसके प्रति अपार श्रद्धा रखते हैं। मेरी रायमें पंडित फूलचन्द्रजी द्वारा रचित इस हिन्दी टीकाको एक बार अवश्य पढ़ना चाहिए। पठन-पाठन के लिए तो यह छात्रोंके लिए बोझिल होगी, पर विद्वानोंको अपना ज्ञान परिपक्व करनेके लिए परमसहायक सिद्ध होगी। टीकामें कुछ विषय ऐसे अवश्य हैं जिनपर विद्वान् चर्चा किया करते हैं, पर उन अल्प विषयोंको गौणकर टीकाका स्वाध्याय करें और प्रवचनकर्त्ता इसे मनोयोग पूर्वक पढ़ें तो उनके ज्ञानमें परिपक्वता नियम से आवेगी।

पंचाध्यायी टीका : एक अध्ययन

पण्डित नाथूलाल शास्त्री, इन्दौर

देशके लब्धप्रतिष्ठ प्रकाण्ड विद्वान् सिद्धान्ताचार्य श्री पण्डित फूलचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्री, वाराणसीकी साहित्य सेवाओंके प्रति जितनी भी कृतज्ञता प्रदर्शित की जावे, थोड़ी है। उनकी अनेक महत्त्वपूर्ण रचनाओंमें एक पंचाध्यायी हिन्दी टीका भी है।

अजमेर शास्त्र भण्डारसे प्राप्त हस्तलिखित पंचाध्यायीका अध्यापन श्री पण्डित बालदेवदासजीके बाद गुरु गोपालदासजी बरैयाने मुरैना महाविद्यालयमें श्री पण्डित वंशीधरजी न्यायालंकार, श्री पंडित मक्खनलालजी एवं श्री पंडित देवकीनन्दनजी व्याख्यानवाचस्पति आदि उनके प्रमुख शिष्योंको पढ़ाते हुए श्री पं० मक्खन-लालजीसे उसका हिन्दी अनुवाद कराया था। वह अपूर्ण ग्रन्थ शास्त्री परीक्षाके पाठ्यक्रममें हो जानेसे व छात्रोंके पठन-पाठनमें उपयोगमें आने लगा है।

पंचाध्यायी ग्रन्थको ग्रन्थकारने पाँच अध्यायोंमें लिखनेका संकल्प किया था परन्तु उपलब्ध ग्रन्थ केवल डेढ़ अध्यायमें ही है। सम्भव है लिखते हुए ग्रन्थकारका स्वर्गवास हो गया हो।

इस ग्रन्थके रचयिताके सम्बन्धमें श्री पंडित मक्खनलालजीने गम्भीर और महत्त्वपूर्ण रचनाकी दृष्टिसे आचार्य अमृतचन्द्रके नामका उल्लेख किया है। पंडितजीने अपनी आलोचनात्मक ग्रन्थ "आगम मार्ग प्रकाश" में पंचाध्यायीके सम्बन्धमें विस्तारसे विवेचन किया है। श्री पंडित जुगलकिशोरजी मुख्तारने पंचाध्यायीके कर्ता पंडित राजमलजीको माना है। श्री पंडित फूलचन्द्रजीने भी इन्हींको उक्त ग्रन्थका कर्ता स्वीकार किया है।

हमारी दृष्टिमें भी पंचाध्यायीकी रचना आचार्य अमृतचन्द्रकी नहीं है। पंचाध्यायीके जो शंका समा-धानके रूपमें अनेक श्लोक हैं, उनमें अधिक विस्तार हो गया है जो अमृतचन्द्र सूरीकी शैलीके अनुरूप नहीं। जबकि अमृतचन्द्र सूरीकी भाषामें प्रौढता और सूत्र रूप शब्दावली दृष्टिगोचर होती है। ग्रन्थकर्ता अपना नाम ग्रन्थके अन्तमें दिया करते हैं। जब यह ग्रन्थ पूर्ण ही नहीं हो सका तो ग्रन्थकर्ताको अपना परिचय देनेका अवसर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org